इकाई 29 मत्वर्थीय प्रत्यय

इकाई की रूपरेखा

29.0 उद्देश्य

29.1 प्रस्तावना

29.2 मत्वर्थीय प्रत्यय – सूत्र, अर्थ एवं व्याख्या

29.3 सारांश

29.4 शब्दावली

29.5 कुछ उपयोगी पुस्तकें

29.6 अभ्यास प्रश्न

29.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरांत शिक्षार्थी –

- जान सकेंगे कि इकाई का प्रधान प्रत्यय मतुप् है।
- मतुबर्थ – मत्वर्थ से सम्बन्धित मत्वर्थीय प्रत्यय, उनका मूल स्वरूप, प्रायोगिक रूप और उनके अर्थ का अध्ययन शिक्षार्थी इस इकाई में करेंगे।
- हिन्दी में मतुप् का विकास 'वाला' रूप में हुआ है, जैसे – धनवाला, ज्ञानवाला, घरवाली इत्यादि की रूपसिद्धि भी वे जान सकेंगे; तथा
- रूपसिद्धि प्रक्रिया द्वारा शिक्षार्थियों को इन – 'वाला' आदि अर्थों में संस्कृत के प्रयोग का अभ्यास होगा।

29.1 प्रस्तावना

तद्धित प्रकरण के पिछले दो पाठों के अध्ययन से स्पष्ट होता है कि तद्धित प्रत्यय प्रकृत्यर्थ के संबन्धी अर्थ का बोध कराते हैं। जैसे – 'दाक्षि' में इञ् प्रत्यय प्रकृत्यर्थ 'दक्ष' का संबन्धी अपत्य अर्थ का बोधक है।

महर्षि पाणिनि ने अष्टाध्यायी के चौथे और पाँचवें अध्याय के सूत्रों से तद्धित प्रत्ययों और उनके अर्थों का विधान किया है। जैसे – तस्यापत्यम्, ते तद्राजा, तस्य समूहः, तत्र भवः, तेन रक्तं रागात्– इत्यादि सूत्रों से अपत्य, राजा, समूह, भव, रक्त (रंगा गया) इत्यादि 141 अर्थों का विधान हुआ है। इन अर्थों के मुख्यतः पाँच विभाग है। प्रत्येक विभाग का एक अधिकारी प्रत्यय होता है जिसे उन अर्थों का सामान्य (उत्सर्ग) प्रत्यय कहते हैं। अण् प्रत्यय के अधिकार में अपत्य, समूह, राज्य, निवास आदि 44 अर्थ हैं। ठक् प्रत्यय के अधिकार में चरति, तरति,

संस्कृतम् इत्यादि 36 अर्थ हैं, जैसे– व्यवहारेण चरति व्यावहारिकः, दध्ना संस्कृतम् दाधिकम् इत्यादि रूप निष्पन्न होते हैं। यत् प्रत्यय के अधिकार में 31 अर्थ हैं, जिनसे सोदर्य, सतीर्य्ह, धन्य आदि शब्द सिद्ध होते हैं। छ प्रत्यय के अधिकार में हित, प्रकृति और संबन्ध की संभावना ये तीन अर्थ हैं। ठञ् प्रत्यय के अधिकार में क्रीत, संयोग, उत्पात आदि 27 अर्थ हैं। इस प्रकार तद्धितार्थ के ये पाँच अधिकारी प्रत्यय हैं। इनके अतिरिक्त भवनार्थक प्रकरण में खेत, खेती और फसल आदि से संबन्धित 42 अर्थ और उनके भिन्न–भिन्न प्रत्यय एक साथ सूत्र में विहित हैं, जिनमें किसी सामान्य प्रत्यय का अधिकार नहीं है। उसी प्रकार मत्वर्थ प्रत्यय भी सामान्य अण् आदि प्रत्ययों के अधिकार से बाहर हैं।

अवधेय है कि इन सभी तद्धित प्रत्ययार्थों का अपने–अपने प्रकृत्यर्थ के साथ एक विशेष संबन्ध होता है जो उन प्रत्ययार्थों से ही प्रकट होता है। जैसे – दाक्षि में प्रकृत्यर्थ दक्ष का प्रत्ययार्थ सन्तान के साथ जन्य–जनक–भाव सम्बन्ध है, उसी तरह 'पाञ्चाल' में प्रकृत्यर्थ पंचाल देश का प्रत्ययार्थ राजा के साथ शास्य–शासक–भाव संबन्ध है। किन्तु इस पाठ में हम स्वामित्व, संयोग या आधार आदि संबन्धों का अध्ययन करेंगे, जो मत्वर्थीय प्रत्ययों से भासित होते हैं। इस पाठ के प्रत्यय अत्यन्त व्यावहारिक, प्रसिद्ध और बहुत प्रचलित हैं। यहाँ उनका स्वरूप, अर्थ और उनकी प्रकृति का अध्ययन प्रस्तुत है।

29.2 मत्वर्थीय प्रत्यय – सूत्र, अर्थ एवं व्याख्या

सूत्र – तदस्यास्त्यस्मिन्निति मतुप् 5/2/94

वृत्तिः – गावः अस्य अस्मिन् वा सन्ति गोमान्।

सूत्र पद विवरण – तद् प्रथमान्त, अस्य षष्ठ्यन्त, अस्ति सत्ता क्रिया का प्रतिरूपक अव्यय, अस्मिन् सप्तम्यन्त इति विशेष विषय का प्रतिबोधक अव्यय, मतुप् प्रथमान्त, कुल छह पद हैं। इस सूत्र में तथा इस प्रकरण के प्रत्यय विधायक सभी सूत्रों में 'समर्थानां प्रथमाद् वा' इस अधिकार सूत्र के तीनों पदों की अनुवृत्ति होती है। अतः सूत्र का प्रथम पद 'तद्' समर्थ प्रथमान्त पद का बोधक है जो 'अस्ति' के समानाधिकरण से सत्ता – क्रिया के कर्ता का बोधक होता है और उसी से प्रत्यय का विधान होता है। 'अस्य' पद षष्ठ्यर्थ और 'अस्मिन्' पद सप्तम्यर्थ का बोधक है।

सूत्रार्थ – 'तद् अस्य अस्ति' अथवा 'तद् अस्मिन् अस्ति' इस विग्रह में अस्ति क्रिया के कर्ता के वाचक कृत – सन्धि समर्थ प्रथमान्त पद से षष्ठ्यर्थ स्वामित्व आदि सम्बन्ध में अथवा सप्तम्यर्थ अधिकरणता संबन्ध में मतुप् प्रत्यय विकल्प से हो, यह आदेश है।

विशेष व्याख्या निम्नवत् है :

1. जब तद्धित वृत्ति का प्रयोग करना चाहेंगे तब मतुप् आदि तद्धित प्रत्यय होंगे, अन्यथा विग्रह वाक्य का प्रयोग होगा, अतः मत्वर्थीय प्रत्यय भी विकल्प से होते हैं। ये प्रत्यय प्रकृत्यर्थ के स्वामी आदि संबन्धी और प्रकृत्यर्थ के अधिकरण के वाचक होने से सार्थक हैं, अर्थात् प्रकृत्यर्थ से भिन्न अर्थ के वाचक हैं, अतः इनका विधान प्रथमान्त पद से होता है।
2. प्रत्यय का विधान होने के बाद प्रथमान्त पद और प्रत्यय समुदाय की 'कृत्तद्धित–समासाश्च' सूत्र से प्रातिपदिक संज्ञा तथा 'सुपो धातु–प्रातिपदिकयोः' सूत्र से प्रथमा विभक्ति का लोप होकर प्रकृति (मूल शब्द) और प्रत्यय शेष रहते हैं।
3. 'मतुप्' प्रत्यय में 'हलन्त्यम्' सूत्र से अन्त्य 'प्' की इत् संज्ञा होती है तथा 'उपेदशेऽजनुनासिक इत्' सूत्र से तकारोत्तर 'उ' की इत् – संज्ञा होती है। तदनन्तर इत् संज्ञक उ और प् का 'तस्य लोप' सूत्र से लोप होने पर इस प्रत्यय में 'मत्' शेष रहता है, जो प्रकृति के साथ जुड़ता है, अतः वही प्रायोगिक रूप है और 'उप्' अनुबन्ध है। अनुबन्ध केवल उच्चारण के लिए होता है, उसका प्रकृति के साथ प्रयोग नहीं होता है।
4. मतुप् में 'उ' अनुबन्ध के कारण यह प्रत्यय 'उगित्' है, अतः 'उगिदचां सर्वनाम स्थानेऽधातोः' सूत्र से स्वादि पांच विभिक्तयों में नुम् आगम होगा। 'प्' अनुबन्ध के कारण यह पित् है। अन्य मत्वर्थीय प्रत्ययों में भी अनुबन्ध हैं जिनका प्रत्यय विधान के समय उल्लेख किया जायगा।
5. मत्वर्थीय प्रत्ययों में ञ्, ण् अथवा क् अनुबन्ध नहीं हैं, अर्थात् ये प्रत्यय ञित्, णित् अथवा कित् नहीं होते, अतः इनका विधान होने पर 'तद्धितेष्वचाम् आदेः' अथवा 'किति च' सूत्र से प्रकृति में आदिवृद्धि नहीं होती है।
6. मतुप् प्रत्यय का अर्थ अस्य = स्वामी आदि संबन्धी और अस्मिन् = अधिकरण है। इन अर्थों में विहित होने वाले इस पाठ के 'इनि' आदि सभी प्रत्ययों को मत्वर्थीय कहते हैं।
7. इस सूत्र में स्थित 'इति' शब्द अर्थों की विशेषता को सूचित करता है। अर्थात् 'अस्ति' की विवक्षा में जो मतुप् आदि प्रत्यय होते हैं, वे अपने सम्बन्धी और अधिकरण अर्थ की विशेषताओं को प्रकट करते हैं। वे विशेषताएँ निम्नांकित हैं–

    भूम – निन्दा – प्रशंसासु नित्ययोगेऽतिशायने।
    संसर्गेऽस्तिविवक्षायां भवन्ति मतुबादयः।।

1. भूमा = अर्थ में बहुत्व या आधिक्य विशेषता को प्रकट करने के लिए मत्वर्थीय प्रत्यय का प्रयोग करते हैं। जैसे– गोमान् = अपने सामर्थ्य से अधिक या बहुत गायों को रखने वाला स्वामी। बहुत या अधिक शब्द सापेक्ष हैं, अतः जो अपने सामर्थ्य की अपेक्षा अधिक गायें रखता है, उसके लिए गोमान् शब्द का प्रयोग करते हैं। जैसे– सामान्य व्यक्ति के लिए चार–पाँच गायें अधिक हैं, किन्तु किसी गोशाला के लिए चार–पाँच सौ गायें अधिक होंगी। अतः 'गोमान् रमेशः' वाक्य से गायों के स्वामी रमेश के पास

अपने सामर्थ्य से अधिक गायों को रखने की सूचना प्रकट होती है। इसी प्रकार 'गोमती शाला' अथवा 'गोमान् जनपदः' वाक्य से गायों का अधिकरण गोशाला अथवा जनपद में सामान्य की अपेक्षा गायों की अधिकता प्रकट होती है।

2. निन्दा– मत्वर्थीय प्रत्यय से निन्दा या बुराई अर्थ भी प्रकट होता है। जैसे– 'ककुदावर्तिनी कन्या' (जिसके कटि– पृष्ठ भाग में बैल के थूहे के समान मांसल आवर्त = घेरा हो, ऐसी कन्या) इससे कन्या के स्वरूप की निन्दा प्रकट होती है। अथवा 'दन्तुरो बालकः' यहाँ दन्त शब्द से उरच् प्रत्यय बालक के दाँतों के सौन्दर्य की निन्दा प्रकट करता है।
3. प्रशंसा– 'रूपवान् पुरुषः' (सुंदर पुरुष) वाक्य में रूप शब्द से विहित मतुप् प्रत्यय पुरुष के रूप की प्रशंसा व्यंजित करता है।
4. नित्ययोग– नित्य सम्बन्ध। जैसे– 'क्षीरिणो वृक्षाः' वाक्य में क्षीर शब्द से विहित इनि प्रत्यय प्रकृत्यर्थ क्षीर = दूध का वृक्ष से नित्य सम्बन्ध अर्थ को व्यक्त करता है। अतः 'सदा दूध वाले वृक्ष' यह अर्थ प्रकट होता है।
5. अतिशायन = अतिशय। जैसे– 'उदरी कुमारः' या 'उदरिणी कन्या' इस वाक्य में इनि प्रत्यय प्रकृत्यर्थ उदर के अपेक्षाकृत बड़े होने की सूचना देता है। अर्थात् बड़े पेट वाला/वाली कुमार/कुमारी।
6. संसर्ग = सहभाव/संबन्ध। जैसे – चक्री, त्रिशूली, दण्डी का क्रमशः चक्रवाला, त्रिशूल वाला और दण्ड धारण करने वाला अर्थ है। इन तद्धितान्त पदों में 'इनि' प्रत्यय प्रकृत्यर्थ और प्रत्ययार्थ के संसर्ग = संयोग संबन्ध को भी व्यक्त करता है।
7. 'अस्ति' क्रिया पद की विवक्षा में भी मतुप् प्रत्यय होता है। जैसे– अस्तिमान्, अस्तित्ववान्, सत्तावान् इत्यादि।

उक्त विशेषताओं को सूचित करने के लिए भी मतुबर्थीय प्रत्ययों का प्रयोग होता है। विशेष प्रकरण अथवा 'काकु' आदि के प्रयोग से उक्त विशेषताएँ स्पष्ट होती हैं।

इस सूत्र का अर्थ स्पष्ट है, अतः इसकी वृत्ति नहीं की गयी, किन्तु विग्रह के साथ सूत्र का उदाहरण दिया है– गावः अस्य सन्ति अस्मिन् वा सन्ति– गोमान्।

गोमान्– गावः अस्य सन्ति (गाएँ इसकी हैं वह व्यक्ति) अथवा गावः अस्मिन् सन्ति (गाएँ यहाँ हैं, वह देश या जनपद) इस लौकिक विग्रह में तथा 'गो जस् अस्य' अथवा 'गो जस् अस्मिन्' इस अलौकिक विग्रह में अस्ति का समानाधिकरण कर्ता का वाचक प्रथमान्त 'गो जस्' पद से अस्य अथवा अस्मिन् अर्थ में 'तदस्यास्त्यस्मिन्निति मतुप्' सूत्र से मतुप् प्रत्यय होने पर 'अस्य' अथवा 'अस्मिन्' पद का प्रयोग निरस्त हो जाता है, क्योंकि न्याय है– उक्तार्थानाम् अप्रयोगः – जिस अर्थ में प्रत्यय का विधान हो गया उस उक्तार्थक शब्द का प्रयोग नहीं होता, अतः प्रत्यय का विधान हो जाने पर 'गो जस् मतुप्' इस स्थिति में प्रत्यय के अन्तिम अनुबन्ध की 'हलन्त्यम्' सूत्र से तथा 'उपदेशेऽजनुनासिक इत्' सूत्र से प्रत्यय के अन्तिम 'उ' की इत् संज्ञा होने पर 'तस्य लोपः' सूत्र से दोनों इत् संज्ञकों का लोप होकर 'गो जस् मत्' इस समुदाय की 'कृत् तद्धित समासाश्च' सूत्र से प्रातिपदिक संज्ञा होने पर 'सुपो धातु प्रातिपदिकयोः' सूत्र

से मध्यवर्ती विभक्ति का लोप होकर 'गोमत्' मतुबन्त तद्धित प्रातिपदिक से प्रथमा एकवचन में सु विभक्ति होने पर 'उ' अनुबन्ध की इत् संज्ञा और लोप होकर 'गोमत् स्' स्थिति में मतुप् प्रत्यय उगित् होने से 'उगिदचां सर्वनामस्थानेऽधातोः' सूत्र से नुमागम अनुबन्ध लोप होकर 'गोम न् त् स्' इस स्थिति में 'हल्ङ्याब्भ्यो दीर्घात् सु ति स्यपृक्तं हल्' सूत्र से 'स्' का लोप 'संयोगान्तस्य लोपः' सूत्र से 'त्' का संयोगान्त लोप होने पर 'गोमन्' नान्त पद की उपधा मकारोत्तर अकार को 'सर्वनामस्थाने चासम्बुद्धौ' सूत्र से दीर्घ 'आ' होकर गोमान् रूप सिद्ध होता है।

(भ संज्ञा सूत्र)

सूत्र – तसौ मत्वर्थे 1/4/19

वृत्तिः – तान्त–सान्तौ भ– संज्ञौ स्तःय मत्वर्थे प्रत्यये परे। गरुत्मान्। 'वसोः सम्प्रसारणम्' – विदुष्मान्।

सूत्र पद विवरण – तसौ प्रथमा द्विवचनान्त, मत्वर्थे सप्तम्यन्त दो पद हैं। पूर्व सूत्र 'यचि भम्' 1/4/18 से इस सूत्र में अनुवृत्त भम् पद द्विवचन भौ रूप में परिणत हो जाता है।

सूत्रार्थ – तकारान्त और सकारान्त शब्द प्रकृति की भ संज्ञा होती है, मत्वर्थ प्रत्यय पर में रहने पर।

अवधेय – जिस शब्द प्रकृति की भ संज्ञा होती है, उसकी पद संज्ञा नहीं होती, क्योंकि भ संज्ञा पद संज्ञा की बाधिका है। अतः भ संज्ञा होने पर पद संज्ञा निमित्तक कार्य नहीं होते हैं। जैसे उदाहरण देखें।

गरुत्मान् – गरुतः अस्य अस्मिन् वा सन्ति (गरुत् = पंख इसके अथवा इसमें हैं, वह) इस लौकिक विग्रह में तथा 'गरुत् जस् अस्य अस्मिन् वा' इस अलौकिक विग्रह में प्रथमान्त गरुत् पद से 'तदस्यास्त्यस्मिन्निति मतुप्' इस सूत्र से मतुप् प्रत्यय और 'उप्' अनुबन्ध का लोप होने पर 'गरुत् जस् मत्' इस समुदाय की कृत्तद्धित समासाश्च' सूत्र से प्रातिपदिक संज्ञा और 'सुपो धातु प्रातिपदिकयोः' सूत्र से विभक्ति का लोप होने पर 'गरुत् मत्' इति स्थिति में मत्वर्थ प्रत्यय 'मत्' के पर में रहने पर 'तसौ मत्वर्थे' सूत्र से तकारान्त 'गरुत्' प्रकृति की भ संज्ञा होने से 'स्वादिषु असर्वनामस्थाने' सूत्र से प्राप्त पद संज्ञा का बाध हो जाता है, अतः 'झला जशोऽन्ते' सूत्र से 'गरुत्' के तकार को जश्त्व दकार और 'प्रत्यये भाषायां नित्यम्' वार्तिक से दकार को अनुनासिक नकार नहीं होता है। वर्ण सम्मेलन होने पर 'गरुत्मत्' प्रातिपदिक से प्रथमा एकवचन में सु विभक्ति होने पर अनुबन्ध लोप 'गरुत्मत् स्' इस स्थिति में 'उगिदचां सर्वनामस्थानेऽधातोः' सूत्र से नुम् आगम अनुबन्ध लोप 'गरुत्मन् त् स्' इस स्थिति में 'स्' का हल्ङ्यादि लोप, 'त्' का 'संयोगान्त लोप' 'गरुत्मन्' में नान्त की उपधा को 'सर्वनामस्थाने चासम्बुद्धौ' सूत्र से दीर्घ होकर गरुत्मान् रूप निष्पन्न होता है।

'वसोः सम्प्रसारणम्' सूत्र से सम्प्रसारण होकर विदुष्मान् रूप निष्पन्न होता है। यण् (य् व् र् ल्) को क्रमशः इक् (इ उ ऋ लृ) आदेश होना सम्प्रसारण कहलाता है– सूत्र है– 'इग्यणः सम्प्रसारणम्' यह सूत्र सम्प्रसारण संज्ञा करता है।

विदुष्मान् – विद्वांसः अस्य अस्मिन् वा सन्ति (विद्वान् इसके अथवा यहाँ है, वह व्यक्ति अथवा विद्यालय आदि स्थान) इस लौकिक विग्रह में तथा 'विद्वस् जस् अस्य/अस्मिन् वा' इस अलौकिक विग्रह में प्रथमान्त विद्वस् शब्द से 'तदस्यास्त्यस्मिन्निति मतुप्' सूत्र से मतुप् प्रत्यय, अनुबन्ध लोपे होने पर 'विद्वस् जस् मत्' समुदाय की 'कृत्तद्धित समासाश्च' सूत्र से प्रातिपदिक संज्ञा 'सुपो धातु प्रातिपदिकयोः' सूत्र से विभक्ति लोप होने पर 'विद्वस् मत्' स्थिति में 'तसौ मत्वर्थे' सूत्र से सकारान्त प्रकृति विद्वस् की पद संज्ञा बाध कर भ संज्ञा होने के कारण 'वसोः सम्प्रसारणम्' सूत्र से 'व्' को सम्प्रसारण 'उ' होने पर 'विद् उ अ स् मत्' इस स्थिति में 'सम्प्रसारणाच्च' सूत्र से सम्प्रसारण 'उ' से पर में 'अ' का पूर्व रूप होकर उसी में समाहित हो जाने पर 'विद् उ स् मत्' इस स्थिति में 'आदेशप्रत्यययोः' सूत्र से स् को षत्व यानी ष् हो जायेगा, क्योंकि वह 'वसु' आदेश का सकार है। तदनन्तर वर्ण सम्मेलन होकर 'विदुष्मत्' से प्रथमा एक वचन में सु विभक्ति अनुबन्ध लोप, 'उगिदचां सर्वनामस्थानेऽधातोः' सूत्र से नुमागम अनुबन्ध लोप 'विदुष्मन् त् स्' स्थिति में स् का हल्ङ्यादि लोप, त् का संयोगान्त लोप होने पर विदुष्मन् में नान्त की उपधा को 'सर्वनामस्थाने चासम्बुद्धौ' सूत्र से दीर्घ होकर 'विदुष्मान्' रूप सिद्ध होता है। यदि यहाँ 'विद्वस्' की पद संज्ञा हो जाती तो 'वसुस्रंसुध्वंस्वनडुहां दः' सूत्र से स् को द् आदेश हो जाने पर 'विद्वद्मान्' अनिष्ट रूप सिद्ध होता।

('लुक्' का विधान करने वाली वार्तिक)

वार्तिक – गुण–वचनेभ्यो मतुपो लुगिष्टः

पद विवरण – गुणवचनेभ्यः पंचमी बहुवचनान्त, मतुपः षष्ठी एकवचनान्त, लुक् प्रथमान्त और इष्टः प्रथमान्त कुल चार पद हैं।

वार्तिक का अर्थ – गुण के वाचक शब्दों से विहित मतुप् प्रत्यय का लुक् (लोप) वांछित है, अर्थात् लुक् हो।

विशेष –

1. यहाँ वार्तिक में रंग के वाचक शुक्ल, नील, पीत आदि शब्दों का ग्रहण होता है। वे शब्द गुण और गुणी दोनों अर्थों के वाचक होते हैं। अमर कोष में कहा है– गुणे शुक्लादयः पुंसि गुणि– लिङ्गास्तु तद्वति (1/5/17), अर्थात् शुक्ल आदि शब्द जब रंग गुण के वाचक होते हैं तब उनका प्रयोग पुंलिंग में होता है और जब वे गुणवान् अर्थ को प्रकट करते हैं तब गुणवान् के लिंग के समान उनमें लिंग का प्रयोग होता है। जैसे– वस्त्राणां शुक्लो गुणः (वस्त्रों का सफेद रंग है)। यहाँ शुक्ल शब्द का रंग अर्थ में प्रयोग होने से पुलिंग है। इनका गुणवान् में प्रयोग जैसे – शुक्लः पटः, शुक्ला

शाटी, शुक्लं वस्त्रम्। यहाँ गुणवान् अर्थ में विशेषण होने से विशेष्य के समान लिंग का प्रयोग है। एवञ्च वर्ण वाची शब्दों से वाला/वाली अर्थ में विहित मतुप् प्रत्यय का इस वार्तिक से लुक् यानी लोप होता है। अन्य गुणवाची शब्दों से मतुप् का लुक् नहीं होता है। अतः 'शुक्लं वस्त्रम्' के समान 'रूपं वस्त्रम्' का प्रयोग नहीं होगा, अपितु 'रूपवद् वस्त्रम्' प्रयोग होगा।

2. लुक् और लोप समानार्थक होने पर भी इनमें यह अन्तर है कि लोप होने पर प्रत्यय के आश्रित कार्य होते हैं, किन्तु लुक् होने पर प्रत्ययाश्रित कार्य नहीं होते, क्योंकि 'न लुमताङ्गस्य' सूत्र तदाश्रित कार्य का निषेध करता है। पूर्व पाठ में यह विषय उदाहरण के साथ स्पष्ट किया गया है, उसे ध्यान में रखना चाहिए।

शुक्लः पटः – शुक्लः अस्य अस्मिन् का अस्ति– (शुक्ल गुण जिसका/जिसमें है, वह पट) इस लौकिक विग्रह में तथा 'शुक्ल सु अस्य/अस्मिन्' इस अलौकिक विग्रह में वर्णवाची प्रथमान्त शुक्ल शब्द से 'तदस्यास्त्यस्मिन्निति मतुप्' सूत्र से मतुप् प्रत्यय, प्रातिपदिक संज्ञा, विभक्ति लोप होने पर 'शुक्ल मत्' इस स्थिति में 'गुणवचनेभ्यो मतुपो लुगिष्टः' वार्तिक से प्रत्यय का लुक् हो जाने पर शेष 'शुक्ल' प्रकृति ही प्रत्ययार्थ के साथ अपने अर्थ का बोध कराती है, क्योंकि न्याय है – यः शिष्यते स लुप्यमानार्थाभिधायी– अर्थात् जो शेष रहता है, वही लोप हुए के अर्थ का भी अभिधान करता है। यहाँ 'शुक्लः पटः' में विशेष्य पट है। उसमें पुंलिंग है, अतः विशेष्य के अनुसार विशेषण शुक्ल प्रतिपदिक से पुंलिंग प्रथमा के एक वचन में 'सु' विभक्ति अनुबन्ध लोप होने पर 'ससजुषो' रुः' सूत्र से स् को 'रु' अनुबन्ध लोप होने पर 'खरवसानयोः विसर्जनीयः' से 'र्' को विसर्ग होकर शुक्लः रूप सिद्ध होता है।

कृष्णः – कृष्णः अस्य अस्मिन् वा अस्ति (काला रंग इसका अथवा इसमें है, वह) इस लौकिक विग्रह में तथा 'कृष्ण सु अस्य/अस्मिन्' इस अलौकिक विग्रह में वर्ण वाचक प्रथमान्त कृष्ण सु पद से अस्य/अस्मिन् अर्थ में 'तदस्यास्त्यस्मिन्निति मतुप्' सूत्र से मतुप् प्रत्यय, अनुबन्ध लोप, प्रातिपदिक संज्ञा और विभक्ति लोप होने पर 'कृष्ण मत्' स्थिति में 'गुणवचनेभ्यो मतुपो लुगिष्टः' वार्तिक से मतुप् प्रत्यय का लुक् हो जाने पर शेष कृष्ण प्रातिपदिक से प्रथमा एक वचन सु विभक्ति अनुबन्ध लोप रुत्व और विसर्ग होकर कृष्णः रूप निष्पन्न होता है। यह पुंलिंग 'काले वाला' का विशेषण है।

शुक्ल आदि गुण वाचक शब्द – शुक्लः, शुभ्रः, शुचिः, श्वेतः, विशदः, श्येतः, पाण्डरः, अवदातः, सितः, गौरः, अवलक्षः, वलक्षः, धवलः, अर्जुनः। हरिणः, पाण्डुरः, पाण्डुः, धूसरः। कृष्णः, नीलः, असितः, श्यामः, कालः, श्यामलः, मेचकः। पीतः, गौरः, हरिद्राभः। पालासः, पलासः, हरितः, हरित्। लोहितः, रोहितः, रक्तः। शोणः, अरुणः, पाटलः। श्यावः, कपिशः, धूम्रः, धूमलः। कडारः, कपिलः, पिङ्गः, पिशङ्गः, कद्रुः, पिङ्गलः। चित्रम्, कर्मीरः, किर्मीरः, कल्माषः, शबलः, एतः, कर्बुरः। ये कुल 55 शब्द शुक्लादि गुण वाचक हैं। इनसे विहित मत्वर्थ प्रत्यय का प्रकृत वार्तिक से लुक् होता है। ये शब्द गुण = वर्ण का वाचक होने पर पुलिंग होंगे तथा गुणवान् का वाचक होने पर विशेष्य के अनुसार लिंग और वचन से युक्त होंगे।

(लच् प्रत्यय का विधि सूत्र)

सूत्र – प्राणिस्थाद् आतो लजन्यतरस्याम् 5/2/96

वृत्तिः – प्राणिस्थात् किम्? शिखावान् दीपः।

उदाहरणम् – चूडालः – चूडावान्।

सूत्र पद विवरण – प्राणिस्थात् पंचम्यन्त विशेषण, आतः पंचम्यन्त, लच् प्रथमान्त, अन्यतरस्याम् सप्तम्यन्त चार पद हैं।

सूत्रार्थ – प्राणी में स्थित मूर्त अंग के वाचक आकारान्त प्रथमान्त पद से अस्य/अस्मिन् अर्थ में विकल्प से लच् प्रत्यय हो। इस प्रत्यय में 'च्' अनुबन्ध है, इसकी इत् संज्ञा और लोप होने पर केवल 'ल' शेष रहता है। यह प्रत्यय चित् कहलाता है। यह प्रत्यय विकल्प से होता है। इसके अभाव में मतुप् प्रत्यय होगा, अतः एक ही शब्द के दो तद्धितीय रूप निष्पन्न होंगे। मतुप् के अभाव में विग्रह वाक्य का भी प्रयोग होगा।

चूडालः – चूडा अस्य/अस्मिन् वा अस्ति (कलँगी जिसके अथवा जिसमें है, वह मोर, मुर्गा आदि प्राणी) इस विग्रह में तथा 'चूडा स् अस्य/अस्मिन्' इस अलौकिक विग्रह में प्राणी के अंग के वाचक प्रथमान्त चूडा पद से 'प्राणिस्थाद् आतो लजन्यतरस्याम्' सूत्र से लच् प्रत्यय होने पर 'हलन्त्यम्' सूत्र से 'च्' की इत् संज्ञा 'तस्य लोपः' सूत्र से उसका लोप होने पर 'चूडा स् ल' समुदाय की 'कृत्तद्धित समासाश्च' सूत्र से प्रातिपदिक संज्ञा और 'सुपो धातु–प्रातिपदिकयोः' सूत्र से विभक्ति का लोप होने पर 'चूडाल' प्रातिपदिक से प्रथमा एक वचन मो सु विभक्ति और उसको रुत्व – विसर्ग होकर चूडालः रूप सिद्ध होता है।

चूडावान् – चूडा अस्य/अस्मिन् वा अस्ति – इस लौकिक विग्रह में तथा 'चूडा स् अस्य/अस्मिन्' इस अलौकिक विग्रह में प्राणिस्थ अंग वाचक प्रथमान्त चूडा शब्द से लच् प्रत्यय के अभाव में 'तदस्यास्त्यस्मिन्निति मतुप्' सूत्र से मतुप् प्रत्यय अनुबन्ध लोप होने पर 'चूडा स् मत्' समुदाय की प्रातिपदिक संज्ञा और विभक्ति लोप होने पर चूडामत्' स्थिति में 'मादुपधायाश्च मतोर्वोऽयवादिभ्यः' सूत्र से मतुप् के 'म' को 'व' आदेश होने पर 'चूडावत्' प्रातिपदिक से प्रथमा एक वचन सु विभक्ति, 'उगिदचां सर्वनामस्थानेऽधातोः' सूत्र से नुम् आगम अनुबन्ध लोप होने पर 'चूडावन् त् स्' इस स्थिति में 'स्' का हल्ङ्यादि लोप, 'त्' का संयोगान्त लोप होने पर 'चूडावन्' स्थिति में नान्त की उपधा को 'सर्वनामस्थाने चासम्बुद्धौ' सूत्र से दीर्घ होकर चूडावान् रूप सिद्ध होता है।

('व' आदेश का विधि सूत्र)

सूत्र – माद् उपधायाश्च मतोर्वोऽयवादिभ्यः 8/2/9

सूत्रार्थ – मकारान्त, अकारान्त और आकारान्त तथा मकारोपध अकारोपध और आकारोपध शब्द से विहित मतुप् प्रत्यय के मकार को वकार आदेश हो, किन्तु यवादि शब्दों से पर में वकार आदेश न हो।

सूत्र के उदाहरण

1. मकारान्त – किंवान्, इदंवान्
2. अकारान्त – ज्ञानवान्, धनवान्
3. आकारान्त – विद्यावान्, चूडावान्
4. मकारोपध – लक्ष्मीवान्, शमीवान्
5. अकारोपध – वेतस्वान्, यशस्वान्
6. आकारोपध – भास्वान्, सुभास्वान्

शब्द के अन्तिम वर्ण से पूर्व वर्ण को उपधा कहते हैं – 'अलोऽन्त्यात् पूर्व उपधा' उपधा संज्ञा सूत्र अजन्त पुंल्लिंग प्रकरण में है।

यवादि गण – यव शब्द आदि = आरंभ में है जिसके, उस शब्द समूह को यवादि गण कहते हैं। उन शब्दों में मतुप् के मकार को वकार आदेश नहीं होता है। वे शब्द निम्नांकित हैं– यव, दल्मि, उर्मि, ऊर्मि, भूमि, कृमि, क्रुञ्चा, वशा, द्राक्षा, ध्राक्षा, ध्रजि, व्रजि, ध्वजि, निजि, सिजि, सञ्जि, हरित्, ककुद्, मरुत्, गरुत्, इक्षु, द्रु, मधु। ये 23 शब्द यवादि गण हैं। यह आकृति गण है, अतः इनके अतिरिक्त वे शब्द भी इस गण के हैं, जिनमें वकारादेश नहीं मिलता है।

प्राणिस्थात् किम्? शिखावान् दीपः।

'प्राणिस्थाद् आतो लजन्यतरस्याम्' सूत्र में आकारान्त शब्द प्राणी में स्थित अंग का वाचक हो, ऐसा क्यों कहा? इसलिए कि 'शिखा अस्य अस्तीति शिखावान् दीपः (लौ वाला दीप) यहाँ लच् प्रत्यय न हो। यहाँ शिखा प्राणिस्थ नहीं, अपितु दीपस्थ है, इसलिए इस शिखा शब्द से लच् नहीं होगा, किन्तु सामान्य मतुप् होकर 'शिखावान्' रूप होगा।

शिखावान् – 'शिखा अस्य/अस्मिन् अस्ति' इस लौकिक विग्रह में तथा 'शिखा स् अस्य/अस्मिन्' इस अलौकिक विग्रह में प्रथमान्त शिखा शब्द से 'तदस्यास्त्यस्मिन्निति मतुप्' सूत्र से मतुप्, अनुबन्ध लोप 'शिखा स् मत्' समुदाय की प्रातिपदिक संज्ञा और विभक्ति लोप होकर 'शिखा मत्' स्थिति में 'मादुपधायाश्च मतोर्वोऽयवादिभ्यः' सूत्र से मकार को वकार आदेश होने पर 'शिखावत्' प्रातिपदिक से प्रथमा एकवचन में सु विभक्ति, अनुबन्ध लोप, 'उगिदचां सर्वनामस्थानेऽधातोः' सूत्र से नुम् आगम अनुबन्ध लोप होने पर 'शिखावन् त् स्' स्थिति में स्

का हल्ङ्यादि लोप, त् का संयोगान्त लोप और नान्त की उपधा को 'सर्वनामस्थाने चासंबुद्धौ' सूत्र से दीर्घ होकर शिखावान् रूप निष्पन्न होता है।

(नियम वार्तिक)

वार्तिक – प्राण्यङ्गादेव

वार्तिकार्थ – प्राणी में स्थित मूर्त अंग के वाचक आकारान्त शब्द से ही लच् प्रत्यय हो। अतः यहाँ लच् नहीं होगा– मेधावान् (मेधा = धारणावाली बुद्धि से युक्त)। क्योंकि मेधा आकारान्त तो है, प्राणी में रहती भी है, किन्तु प्राणी का मूर्त अंग नहीं है। प्राणी के मूर्त अंग तो हस्त, पाद, ग्रीवा आदि हैं।

मेधावान् – मेधा अस्य/अस्मिन् वा अस्ति – इस लौकिक विग्रह में तथा 'मेधा स् अस्य/अस्मिन्' इस अलौकिक विग्रह में प्रथमान्त मेधा शब्द से 'तदस्यास्त्यस्मिन्निति 'मतुप्' सूत्र से मतुप् अनुबन्धलोप, समुदाय की प्रातिपदिक संज्ञा और विभक्ति लोप होकर 'मेधा मत्' स्थिति में 'मादुपधायाश्च मतोर्वोऽयवादिभ्यः' सूत्र से म को व आदेश होने पर मेधावत् प्रातिपदिक से प्रथमा एक वचन में सु विभक्ति, अनुबन्ध लोप, 'उगिदचाम्–' इत्यादि सूत्र से नुम् आगम अनुबन्धलोप होने पर 'मेधावन् त् स्' स्थिति में हल्ङ्यादि लोप, संयोगान्त लोप और नान्त की उपधा को दीर्घ होकर मेधावान् रूप सिद्ध होता है।

(श – न – इलच् प्रत्यय का विधि सूत्र)

सूत्र – लोमादि–पामादि–पिच्छादिभ्यः शनेलचः 5/2/100

वृत्तिः – लोमादिभ्यः शः, लोमशः – लोमवान्, रोमशः– रोमवान्। पामादिभ्यो नः, पामनः। (ग. सू.) अङ्गात् कल्याणे, अङ्गना। (ग. सू.) लक्ष्म्या अच्च, लक्ष्मणः। पिच्छादिभ्य इलच्, पिच्छिलः–पिच्छवान्।

सूत्र पद विवरण – लोमादिपामादिपिच्छादिभ्यः पंचमी बहुवचनान्त, शनेलचः प्रथमा बहुवचनान्त दो पद हैं। शेष पदों की अनुवृत्ति होती है।

सूत्रार्थ – सूत्र में तीन प्रकार की प्रकृतियों और क्रमशः तीन प्रकार के प्रत्ययों का एक साथ उल्लेख है। वृत्ति में उन्हें उदाहरण के साथ अलग–अलग दर्शाया गया है। उसके अनुसार यहाँ प्रकृतियों का विवरण और उदाहरणों की रूप सिद्धि प्रस्तुत है–

1. लोमादि प्रथमान्त पदों से मत्वर्थ में विकल्प से श प्रत्यय हो। लोमादि गण है। इसमें कुल 9 शब्द हैं– लोमन्, रोमन्, बभ्रु, हरि, गिरि, कर्क, कपि, मुनि और तरु।

लोमशः – लोमवान् – लोमानि सन्ति अस्य अस्मिन् वा – (लोम = रोएँ हैं जिसके/जिसमें, वह) इस लौकिक विग्रह में तथा 'लोमन् जस् अस्य/अस्मिन्' इस अलौकिक विग्रह में प्रथमान्त लोमन् शब्द से 'लोपादि–पामादि– पिच्छादिभ्यः शनेलचः' सूत्र से विकल्प से श प्रत्यय होने

पर 'लोमन् जस् श' समुदाय की प्रातिपदिक संज्ञा और विभक्ति लोप होकर 'लोमन् श' स्थिति में 'स्वादिषु असर्वनाम स्थाने' सूत्र से 'लोमन्' की पद संज्ञा होने पर 'न लोपः प्रातिपदिकान्तस्य' सूत्र से न् का लोप होकर 'लोमश' प्रातिपदिक से प्रथमा एक वचन सु विभक्ति होने पर अनुबन्ध लोप तथा स् को रुत्व–विसर्ग होकर लोमशः रूप की सिद्धि होती है।

लोमवान् – श प्रत्यय के अभाव में 'तदस्यास्त्यस्मिन्निति मतुप्' सूत्र से मतुप्, अनुबन्ध लोप होकर 'लोमन् मत्' इस स्थिति में 'स्वादिषु असर्वनामस्थाने' सूत्र से पद संज्ञा 'न लोपः प्रातिपदिकान्तस्य' सूत्र से न् लोप 'लोम मत्' स्थिति में 'मादुपधायाश्च मतोर्वोऽयवादिभ्यः' सूत्र से म को व आदेश होकर 'लोमवत्' प्रातिपदिक से प्रथमा एक वचन में सु विभक्ति, अनुबन्ध लोप, 'उगिदचाम्–' इत्यादि सूत्र से नुम् आगम अनुबन्ध लोप होकर 'लोमवन् त् स्' स्थिति में स् का हल्ङ्यादि लोप, त् का संयोगान्त लोप, नान्त की उपधा को दीर्घ होकर लोमवान् रूप सिद्ध होता है।

रोमशः – रोमवान् – रोमाणि सन्ति अस्य अस्मिन् (रोम है इसके/इसमें) इस लौकिक विग्रह में तथा 'रोमन् जस् अस्य/अस्मिन इस अलौकिक विग्रह में प्रथमान्त रोमन् शब्द से 'लोमादि–पामादि–पिच्छादिभ्यः शनेलचः' सूत्र से श प्रत्यय होने पर प्रातिपदिक संज्ञा, विभक्ति लोप, पद संज्ञा एवं 'नलोपः प्रातिपदिकान्तस्य' सूत्र से नलोप होकर 'रोमश' प्रातिपदिक से प्रथमा एकवचन में सु विभक्ति रुत्व–विसर्ग होकर रोमशः रूप सिद्ध होता है।

श प्रत्यय के अभाव में 'तदस्यास्त्यस्मिन्निति मतुप्' सूत्र से मतुप् प्रत्यय होने पर 'रोमन् मत्' स्थित में पद संज्ञा न लोप तथा 'मादुपधायाश्च–' इत्यादि सूत्र से वकार आदेश होने पर 'रोमवत्' प्रातिपदिक से प्रथमा एक वचन में सु विभक्ति, नुम् आगम अनुबन्ध लोप होकर 'रोमवन् त् स' स्थिति में हल्ङ्यादि लोप, संयोगान्त लोप एवं उपधादीर्घ होने से 'रोमवान्' रूप सिद्ध होता है।

2. 'लोमादि– पामादि–' सूत्र की दूसरी प्रकृति है– पामादि। प्रथमान्त पामादि शब्दों से न प्रत्यय हो। यथा–पामनः।

पामादि गण में निम्नांकित शब्द हैं– पामन्, वामन्, वेमन्, हेमन्, श्लेष्मन्, कद्रु, कद्रू, वलि, सामन्, ऊष्मन्, कृमि। इन 11 प्रथमान्त पदों से अस्य/अस्मिन् अर्थ में 'न' प्रत्यय हो।

पामनः – पामा अस्य/अस्मिन् अस्ति (पामा = खुजली इसके/इसमें है, वह खुजली वाला) इस लौकिक विग्रह में तथा 'पामन् स् अस्य/अस्मिन्' इस अलौकिक विग्रह में 'लोमादि–पामादि–' इत्यादि सूत्र से न प्रत्यय होने पर प्रातिपदिक संज्ञा और विभक्ति लोप होकर 'पामन् न' इस स्थिति में 'स्वादिषु–' इत्यादि सूत्र से पद संज्ञा 'न लोपः–' इत्यादि सूत्र से न् लोप होकर 'पामन' प्रातिपदिक से प्रथमा एक वचन में सु विभक्ति और उसको रुत्व–विसर्ग होकर पामनः रूप सिद्ध होता है। यहाँ मतुप् प्रत्यय होने पर 'पामवान्' रूप पूर्ववत् प्रथमा एकवचन में सिद्ध होता है।

पामादि गण में गण सूत्र है – (क) अङ्गात् कल्याणे

गण सूत्र का अर्थ – प्रथमान्त अङ्ग शब्द से न प्रत्यय हो, कल्याण = सुन्दर अर्थ में। उदाहरण है – अङ्गना।

अङ्गना – अङ्गानि कल्याणानि सन्ति अस्याः अस्यां वा (अंग सुन्दर हैं इसके/इसमें, वह स्त्री) इस लौकिक विग्रह में प्रथमान्त 'अङ्ग जस्' से 'अङ्गात् कल्याणे' इस गण सूत्र के अनुसार कल्याण अर्थ में 'लोमादि पामादि–' सूत्र से न प्रत्यय होने पर प्रातिपदिक संज्ञा और विभक्ति लोप होकर 'अङ्गन' प्रातिपदिक में स्त्रीत्व की विवक्षा होने से 'अजाद्यतष्टाप्' सूत्र से टाप् प्रत्यय अनुबन्ध लोप 'अङ्गन आ' में सवर्ण दीर्घ प्रथमा एक वचन में सु विभक्ति का हल्ङ्यादि लोप होकर 'अङ्गना' रूप सिद्ध होता है।

अङ्ग से मतुप् प्रत्यय होने पर स्त्रीलिंग में 'अङ्गवती' रूप होता है।

पामादि गण का दूसरा गण सूत्र है – (ख) लक्ष्म्याः अच्च।

अर्थ– प्रथमान्त लक्ष्मी शब्द से न प्रत्यय हो और अन्त्य ईकार को ह्रस्व अकार आदेश हो। उदाहरण– लक्ष्मणः।

लक्ष्मणः – लक्ष्मीः अस्य/अस्मिन् वा अस्ति (लक्ष्मी इसके/इसमें है, वह लक्ष्मी वाला) इस विग्रह में प्रथमान्त 'लक्ष्मी स् ' से 'लक्ष्म्या अच्च' गण सूत्र के अनुसार 'लोमादि पामादि–' इत्यादि सूत्र से न प्रत्यय और अकार आदेश, प्रातिपदिक संज्ञा तथा विभक्ति लोप होकर 'लक्ष्मन' स्थिति में 'अट् कुप्वाङ्नुम्व्यवायेऽपि' सूत्र से णत्व होकर लक्ष्मण प्रातिपदिक से प्रथमा के एक वचन में सु विभक्ति को रुत्व और विसर्ग होकर लक्ष्मणः रूप निष्पन्न होता है।

3. 'लोमादि–पामादि–पिच्छादिभ्यः शनेलचः' सूत्र की तीसरी प्रकृति और प्रत्यय है – पिच्छादिभ्यः इलच्।

अर्थात् पिच्छादि प्रथमान्त पदों से अस्य/अस्मिन् अर्थ में इलच् प्रत्यय विकल्प से हो।

प्रत्यय में 'च' अनुबन्ध है, शेष इल का प्रयोग होता है। यह प्रत्यय अजादि है, अतः भ संज्ञा होगी और प्रकृति के अन्त्य वर्ण का लोप होगा। उदाहरण है – पिच्छिलः – पिच्छवान।

पिच्छादि गण – पिच्छा, उरस्, धुवक, ध्रुवक। जटा घटा काल, वर्ण, उदक, पङ्क और प्रज्ञा। ये 11 शब्द पिच्छादि हैं। इनके आरंभ में पिच्छा शब्द है। कुछ वैयाकरण पिच्छ पाठ करते हैं। पिच्छरू/पिच्छम् (पूंछ) तथा पिच्छा (सेमर का गोंद)। गोंद में फिसलन होती है, अतः तत्त्वबोधिनी निर्णय सागर प्रकाशन मुम्बई में पिच्छा पाठ है।

पिच्छिलः – पिच्छा अस्य अस्मिन् वा अस्ति (पिच्छा = फिसलन इसके/इसमें है, वह फिसलनदार) इस लौकिक विग्रह में प्रथमान्त पिच्छा/पिच्छ शब्द से 'लोमादि पामादि पिच्छादिभ्यः शनेलचः' सूत्र से इलच् प्रत्यय, अनुबन्ध लोप, प्रातिपदिक संज्ञा और विभक्ति लोप

होने पर 'पिच्छा इल' इस स्थिति में भ संज्ञा, 'यस्येति च' सूत्र से अन्त्य आ का लोप होने पर 'पिच्छिल' प्रातिपदिक से प्रथमा एक वचन में सु विभक्ति को रुत्व–विसर्ग होकर पिच्छिलः रूप निष्पन्न होता है।

पिच्छावान्/पिच्छवान् – पिच्छा से मतुप् होने पर 'पिच्छा मत्' स्थिति में वकार आदेश एवं विभक्ति कार्य होकर पिच्छावान् तथा पिच्छ से मतुप् होने पर पिच्छवान् रूप पूर्ववत् सिद्ध होते हैं।

(उरच् प्रत्यय का विधि सूत्र)

सूत्र – दन्त उन्नत उरच् 5/2.106

सूत्र पद विवरण – दन्ते पंचम्यर्थ में सप्तमी एकवचन, उन्नते सप्तम्यन्त प्रकृति का विशेषण, उरच् प्रथमान्त तीन पद हैं।

सूत्रार्थ – प्रथमान्त दन्त शब्द से मत्वर्थ में उरच् प्रत्यय हो, यदि दाँत ऊँचे हों तो। प्रत्यय में 'च्' अनुबन्ध है, अतः यह चित् है।

दन्तुरः – उन्नताः दन्ताः सन्ति अस्य अस्मिन् वा (ऊँचे दाँत हो जिसके/जिसमें, वह) इस विग्रह में प्रथमान्त दन्त शब्द से 'दन्त जस्' स्थिति में 'दन्त उन्नत उरच्' सूत्र से उरच् प्रत्यय अनुबन्ध लोप 'दन्त जस् उर' समुदाय की प्रातिपदिक संज्ञा विभक्ति लोप होने पर 'दन्त उर' स्थिति में भ संज्ञा 'यस्येति च' सूत्र से दन्त के अन्तिम अकार का लोप होने पर 'दन्तुर' प्रातिपदिक से प्रथमा एकवचन में सु विभक्ति को रुत्व– विसर्ग होकर दन्तुरः रूप सिद्ध होता है।

(व प्रत्यय का विधि सूत्र)

सूत्र – केशाद् वोऽन्यतरस्याम् 5/2/109

सूत्र पद विवरण – केशात् पंचम्यन्त, वः प्रथमान्त, अन्यतरस्याम् सप्तम्यन्त तीन पद हैं।

सूत्रार्थ – प्रथमान्त केश शब्द से मत्वर्थ में व प्रत्यय विकल्प से हो। व प्रत्यय के अभाव पक्ष में अदन्त होने से इनि, ठन् तथा सामान्य मतुप् होते हैं। इस प्रकार केश शब्द से क्रमशः चार प्रत्यय होते हैं तथा तद्धित वृत्ति के अभाव में विग्रह वाक्य का भी प्रयोग होता है।

केशवः – केशाः सन्ति अस्य अस्मिन् वा (केश वाला) इस विग्रह में प्रथमान्त केश शब्द से 'केश जस्' इस स्थिति में 'केशाद् वोऽन्यतरस्याम्' सूत्र से व प्रत्यय, प्रातिपदिक संज्ञा, विभक्तिलोप होने पर 'केशव' से प्रथमा एकवचन में सु विभक्ति को रुत्व–विसर्ग होकर केशवः रूप सिद्ध होता है।

केशी – केशाः सन्ति अस्य/अस्मिन् विग्रह में व प्रत्यय के अभाव में 'अत इनिठनौ' सूत्र से इनि और ठन् क्रमशः दो प्रत्यय होंगे, क्योंकि केश शब्द अकारान्त है। इनि में 'इ' अनुबन्ध

का लोप होने पर 'केश इन्' स्थिति में भ संज्ञा यस्येति लोप होने पर 'केशिन्' इन्नन्त प्रातिपदिक से प्रथमा एक वचन में सु विभक्ति होने पर 'सौ च' सूत्र से उपधा के इकार को दीर्घ, हल्ङ्यादि लोप और न लोप होकर केशी रूप सिद्ध होता है।

केशिकः – उक्त विग्रह में 'अत इतिठनौ' से ठन् प्रत्यय, अनुबन्ध लोप 'ठस्येकः' से ठ को इक आदेश होने पर 'केश इक' इस स्थिति में भ संज्ञा यस्येति लोप होकर 'केशिक' से प्रथमा एक वचन में सु विभक्ति को रुत्व–विसर्ग होकर केशिकः रूप सिद्ध होता है।

केशवान् – उक्त विग्रह में केश से 'तदस्यास्त्यस्मिन्निति मतुप्' सूत्र से मतुप् होने पर 'मादुपधायाश्च–' इत्यादि सूत्र से वकार आदेश होकर 'केशवत्' से प्रथमा एक वचन में पूर्ववत् केशवान् रूप सिद्ध होता है।

('व' प्रत्यय विधि वार्तिक)

वार्तिक – अन्येभ्योऽपि दृश्यते।

वार्तिकार्थ – केश शब्द से भिन्न शब्दों से भी मत्वर्थ में व प्रत्यय होता है।

मणिवः – मणिः अस्य अस्मिन् वा अस्ति (मणिवाला नाग विशेष) इस विग्रह में प्रथमान्त मणि शब्द से 'अन्येभ्योऽपि दृश्यते' वार्तिक से व प्रत्यय, प्रातिपदिक संज्ञा, विभक्ति लोप होने पर 'मणिव' से प्रथमा एक वचन में सु विभक्ति को रुत्व– विसर्ग होकर मणिवः रूप सिद्ध होता है।

(व प्रत्यय और स् लोप विधि वार्तिक)

वार्तिक – अर्णसो लोपश्च।

वार्तिकार्थ – प्रथमान्त अर्णस् शब्द से मत्वर्थ में व प्रत्यय और प्रकृति के अन्त्य सकार का लोप हो।

अर्णवः – अर्णांसि सन्ति अस्य अस्मिन् (अर्णस् = जल है जिसका/जिसमें, वह समुद्र) इस विग्रह में प्रथमान्त 'अर्णस् जस्' से 'अर्णसो लोपश्च' वार्तिक से व प्रत्यय और स् का लोप होने पर तथा प्रातिपदिक संज्ञा और विभक्ति का लोप होकर 'अर्णव' से प्रथमा एक वचन में सु विभक्ति को रुत्व–विसर्ग होकर अर्णवः रूप निष्पन्न होता है।

(इनि और ठन् प्रत्यय का विधि सूत्र)

सूत्र – अत इनि – ठनौ 5/2/115

सूत्रार्थ – प्रथमान्त ह्रस्व अकारान्त शब्द से मत्वर्थ में इनि और ठन् प्रत्यय हों। इनि में अन्त्य इ अनुबन्ध है, इन् प्रत्यय का स्वरूप है तथा ठन् में न् अनुबन्ध है और ठ को इक आदेश होता है। पक्ष में मतुप् भी होता है।

दण्डी – दण्डः अस्य अस्मिन् वा अस्ति (दण्ड वाला) इस विग्रह में प्रथमान्त 'दण्ड स्' से 'अत इनि ठनौ' सूत्र से इनि प्रत्यय अनुबन्ध लोप, प्रातिपदिक संज्ञा और विभक्ति लोप होने पर 'दण्ड इन्' स्थिति में भ संज्ञा होने पर 'यस्येति च' सूत्र से डकारोत्तर अकार का लोप होकर इन्नन्त 'दण्डिन्' से प्रथमा एकवचन में सुविभक्ति होने पर 'सौ च' सूत्र से उपधा को दीर्घ, न लोप और सुलोप होकर दण्डी रूप निष्पन्न होता है।

दण्डिकः – उक्त विग्रह में प्रकृत सूत्र से ठन् प्रत्यय, अनुबन्ध लोप 'ठस्येकः' सूत्र से ठ को इक आदेश होने पर 'दण्ड इक' स्थिति में भ संज्ञा यस्येति लोप होकर दण्डिक से प्रथमा एक वचन में सु को रुत्व – विसर्ग होकर यह रूप निष्पन्न होता है।

(इनि और ठन् प्रत्यय का विधि सूत्र)

सूत्र – व्रीह्यादिभ्यश्च 5/2/116

सूत्रार्थ – प्रथमान्त व्रीहि आदि शब्दों से मत्वर्थ में इनि और ठन् प्रत्यय हों। व्रीहि आदि शब्द अदन्त नहीं हैं, अतः पूर्व सूत्र से इनि और ठन् प्राप्त नहीं है।

व्रीह्यादि गण – व्रीहि, माया, शाला, शिखा, माला, मेखला, केका, अष्टका, पताका, चर्मन्, कर्मन्, वर्मन्, दंष्ट्रा, संज्ञा, वडवा, कुमारी, नौ, वीणा, बलाका। यव–खदनौ कुमारी। शीर्षान्नञः। इन शब्दों से मत्वर्थ में इनि और ठन् प्रत्यय होते हैं।

व्रीही – व्रीहिकः – व्रीहयः अस्य अस्मिन् वा सन्ति (धान वाला) इस विग्रह में प्रथमान्त व्रीहि से 'व्रीह्यादिभ्यश्च' सूत्र से इनि और ठन् प्रत्यय होंगे। इन् होने पर व्रीहि की भ संज्ञा और अन्त्य इकार का यस्येति लोप होकर इन्नन्त व्रीहिन् तथा ठन् प्रत्यय होने पर 'ठस्येकः' सूत्र से ठ को इक आदेश भ संज्ञा और यस्येति लोप होकर अकारान्त व्रीहिक शब्द से प्रथमा एकवचन में विभक्ति कार्य होकर ये रूप निष्पन्न होते हैं।

('विनि' प्रत्यय का विधि सूत्र)

सूत्र – अस् – माया – मेधा – स्रजो विनिः 5/2/121

सूत्रार्थ – प्रथमान्त असन्त शब्द से तथा माया, मेधा और स्रज् शब्द से मत्वर्थ में विनि प्रत्यय विकल्प से हो। विनि में इ अनुबन्ध है, विन् प्रत्यय का स्वरूप है।

यशस्वी – यशः अस्य अस्ति (यशवाला) इस विग्रह में प्रथमान्त असन्त 'यशस् स्' स्थिति में 'अस्मायामेधास्रजो विनिः' सूत्र से विनि प्रत्यय अनुबन्ध लोप, प्रातिपदिक संज्ञा, विभक्ति लोप होने पर यशस्विन् से प्रथमा एक वचन में सु विभक्ति होने पर 'सौ च' सूत्र से उपधा दीर्घ हल्ङ्यादि लोप और नलोप होकर यह रूप सिद्ध होता है।

यशस्वान् – उक्त विग्रह में 'तदस्यास्त्यस्मिन्निति मतुप्' सूत्र से मतुप् प्रत्यय अनुबन्ध लोप 'मादुपधायाश्च–' इत्यादि सूत्र से वकार आदेश होकर 'यशस्वत्' से प्रथमा एकवचन में विभक्ति कार्य होकर पूर्ववत् यशस्वान् रूप निष्पन्न होता है।

मायावी – माया अस्य अस्मिन् वा अस्ति (मायावाला, छली) इस विग्रह में प्रथमान्त 'माया स्' से 'अस्मायामेधास्रजो विनिः' सूत्र से विनि प्रत्यय, अनुबन्ध लोप एवं विभक्ति लोप होने पर 'मायाविन्' इन्नन्त से प्रथमा एक वचन में सु विभक्ति होने पर उपधा दीर्घ, हल्ङ्यादि लोप नलोप होकर मायावी तथा मतुप् होने पर मायावान् रूप होते हैं।

मेधावी – मेधा अस्य अस्ति (धारणा शक्तिवाला) इस विग्रह में प्रकृत सूत्र से विनि प्रत्यय होने पर 'मेधाविन्' इन्नन्त से प्रथमा एकवचन में मेधावी तथा मतुप् होने पर मेधावान् रूप सिद्ध होते हैं।

स्रग्वी– स्रग् अस्य अस्ति (स्रक् = माला जिसका/जिसमें हो, वह माला पहना हुआ) इस विग्रह में प्रथमान्त 'स्रज् स्' इस स्थिति में 'अस्मायामेधास्रजो विनिः' सूत्र से विनि प्रत्यय, अनुबन्ध लोप, विभक्ति लोप होकर 'स्रज् विन्' स्थिति में 'स्वादिषु असर्वनामस्थाने' सूत्र से पद संज्ञा होने पर 'चोरू कुः' सूत्र से कुत्व होकर ज् को ग् होने पर स्रग्विन् इन्नन्त प्रातिपदिक से प्रथमा एकवचन में उपधा दीर्घ हल्ङ्यादि लोप न लोप होकर स्रग्वी तथा मतुप् होने पर स्रग्वान् रूप निष्पन्न होते हैं।

('ग्मिन्' प्रत्यय का विधि सूत्र)

सूत्र – वाचो ग्मिनिः 5/2/124

सूत्रार्थ – प्रथमान्त वाच् शब्द से मत्वर्थ में ग्मिनि प्रत्यय हो। प्रत्यय का अन्त्य इकार इत् संज्ञक अनुबन्ध है, अतः इसका स्वरूप ग्मिन् है। 'लशक्वतद्धिते' सूत्र से प्रत्यय के गकार की इत् संज्ञा नहीं होती है, क्योंकि यह तद्धित प्रत्यय है। यद्यपि वाच् के चकार को कुत्व होकर गकार हो सकता है, फिर भी प्रत्यय में गकार इसलिए किया है कि 'प्रत्यये भाषायां नित्यम्' वार्तिक से अनुनासिक न हो। अन्यथा मकार पर में होने से ग् को अनुनासिक ङ् होता।

वाग्ग्मी – वाचः अस्य सन्ति (अच्छा बोलने वाला) इस विग्रह में प्रथमान्त 'वाच् जस्' से 'वाचो ग्मिनिः' सूत्र से ग्मिनि प्रत्यय अनुबन्ध लोप होने पर 'वाच् ग्मिन्' स्थिति में 'स्वादिषु असर्वनामस्थाने' सूत्र से पद संज्ञा 'झलां जश् झशि' सूत्र से जशत्व होकर वाच् के चकार को जकार होने पर 'चोः कुः' सूत्र से उसको गकार होकर वाग्ग्मिन् से प्रथमा एक वचन में पूर्ववत् उपधा दीर्घ, सुलोप एवं नलोप होकर वाग्ग्मी रूप सिद्ध होता है। इस शब्द में दो गकार हैं। प्रत्यय से प्रशंसा सूचित होती हैय अतः अच्छे वक्ता को वाग्ग्मी कहते हैं।

('अच्' प्रत्यय का विधि सूत्र)

सूत्र – अर्श आदिभ्योऽच् 5/2/127

सूत्रार्थ – प्रथमान्त अर्शस् आदि शब्दों से मत्वर्थ में अच् प्रत्यय हो। प्रत्यय में 'च्' इत्संज्ञक अनुबन्ध है, प्रत्यय का स्वरूप है– अ, यह चित् है।

अर्श आदि गण है। इसमें निम्नांकित शब्द हैं– अर्शस्, उरस्, तुन्द, चतुर, कलित, जटा, घटा, घाटा, अभ्र, अघ, कर्दम, अम्ल, लवण। स्वाङ्गाद् हीनात् (अंग विकार के वाचक)। वर्णात् (ककारादि वर्ण वाची)। अर्श आदि आकृति गण है। अर्थात् जिन शब्दों से मत्वर्थ की प्रतीति हो और अन्य मत्वर्थीय प्रत्यय का विधान किसी सूत्र से न हुआ हो तो ऐसे शब्दों को इस गण का समझ लेना चाहिए। जैसे– पाप शब्द पापवाला अर्थ में प्रयुक्त हो तो उसे इस गण का समझ कर अच् प्रत्यय से सिद्ध कर लेना चाहिए। यह प्रत्यय होने पर रूप में कोई अन्तर नहीं पड़ता क्योंकि भ संज्ञक प्रकृति के अन्त्य अच् का यस्येति लोप हो जाता है और प्रत्यय का अ उसमें मिल जाता है।

अर्शसः – अर्शांसि सन्ति अस्य अस्मिन् वा (बवासीर रोगवाला) इस विग्रह में प्रथमान्त 'अर्शस् जस्' स्थिति में 'अर्श आदिभ्योऽच्' सूत्र से अच् प्रत्यय, अनुबन्ध लोप, प्रातिपदिक संज्ञा और विभक्ति लोप होने पर 'अर्शस् अ' स्थिति में सम्मेलन से अकारान्त 'अर्शस' शब्द से प्रथमा एकवचन में सु को रुत्व– विसर्ग होकर यह रूप सिद्ध होता है।

('युस्' प्रत्यय का विधि सूत्र)

सूत्र – अहं शुभमोर्युस् 5/2/140

सूत्रार्थ – अहम् और शुभम् – इस मकारान्त अव्ययों से मत्वर्थ में युस् प्रत्यय हो। युस् में अन्त्य स् की इत् संज्ञा और 'तस्य लोपः' से लोप होता है, अतः यह प्रत्यय सित् है। इसमें 'यु' प्रत्यय स्वरूप है।

अहंयुः – अहम् = अहंकारः अस्य अस्मिन् वा अस्ति (अहंकारी) इस विग्रह में 'अहम्' अव्यय से 'अहंशुभमोर्युस्' सूत्र से युस् प्रत्यय अनुबन्ध लोप होकर 'अहम् यु' स्थिति में सित् प्रत्यय पर में होने से अहम् प्रकृति की 'सिति च' वार्तिक से पद संज्ञा होने पर 'मोऽनुस्वारः' सूत्र से अनुस्वार होकर 'अहंयु' प्रातिपदिक से प्रथमा एकवचन में सु विभक्ति को रुत्व–विसर्ग होकर 'अहंयुः' रूप सिद्ध होता है।

शुभंयुः – शुभम् = कल्याणम् अस्य अस्मिन् वा अस्ति (शुभ से युक्त) इस विग्रह में शुभम् अव्यय से 'अहंशुभमोर्युस्' सूत्र से यु होने पर अनुबन्धलोप 'सिति च' वार्तिक से प्रकृति की पद संज्ञा 'मोऽनुस्वारः' सूत्र से अनुस्वार होकर 'शुभंयु' प्रातिपदिक से प्रथमा एकवचन में सु विभक्ति को रुत्व–विसर्ग होकर यह रूप निष्पन्न होता है।

इति मत्वर्थीयाः – मत्वर्थीय प्रत्ययों का प्रकरण यहां पूर्ण होता है।

29.3 सारांश

हिन्दी में धनवाला, बलवाला आदि शब्दों में 'वाला' से जो अर्थ प्रकट होता है, उसे मत्वर्थ कहते हैं। मत्वर्थ के बोधक प्रत्ययों को मत्वर्थीय कहते हैं। इस पाठ में निम्नांकित मत्वर्थीय प्रत्ययों का अध्ययन हुआ है– मतुप्, लच्, श, न, इलच्, उरच्, व, इनि, ठन्, विनि, ग्मिनि, अच् और युस्, ये सभी अल्प विराम है। ये सारे प्रत्यय प्रथमान्त पद से विहित होते हैं। इनमें मतुप् सभी प्रकृतियों से होता है, अतः उसे सामान्य प्रत्यय तथा शेष प्रत्यय विशेष प्रकृतियों से होते हैं, अतः उन्हें विशेष प्रत्यय कहते हैं। इस प्रकार मतुप् तथा शेष प्रत्ययों में सामान्य–विशेष–भाव होने पर भी परस्पर बाध्य–बाधक–भाव नहीं हैं, अतः जहाँ दूसरे प्रत्यय होते हैं वहाँ मतुप् भी होता है, जैसे – मेधावी – मेधावान्, अहंयु – अहंवान्, धनिकः –धनवान् इत्यादि।

नील, पीत आदि वर्ण के वाचक शब्दों से मतुप् का लुक् हो जाता है, अतः वे गुण और गुणी दोनों अर्थों के प्रकरणानुसार वाचक होते हैं। रूप सिद्धि में मत्वर्थीय प्रत्ययों के विधान से प्रकृति के आदि अच् में वृद्धि नहीं होती, किन्तु इलच्, उरच्, इनि, अच् और इक (ठन्) प्रत्ययों का विधान होने पर प्रकृति की भ संज्ञा होने से उसके अन्तिम अच् का यस्येति लोप होता है। इन प्रत्ययों के विधान से तकारान्त, इन्नन्त (नकारान्त) और अकारान्त तद्धित प्रातिपदिक निष्पन्न होते हैं। जैसे– गोमत्, मेधावत्, दण्डिन्, ज्ञानिन्, दन्तुर, अर्णव इत्यादि। सभी विभक्तियों में भगवत्, विद्यार्थिन्, और बालक जैसे इनके रूप होंगे।

मत्वर्थीय प्रत्ययों से निष्पन्न सभी तद्धित शब्द विशेषण होते हैं, अतः तीनों लिंगों में इनका प्रयोग होता है।

29.4 शब्दावली

शब्द (पुलिंग)	अर्थ	स्त्रीलिंग
गोमान्	गौ वाला	गोमती
गरुत्मान्	पंख वाला (गरुड)	गरुत्मती
विदुष्मान्	विद्वानों से शोभित	विदुष्मती
शुक्लः	श्वेत (वस्त्रादि)	शुक्ला
कृष्णः	काला (पट आदि)	कृष्णा
चूडालः	चूडा या मुकुट वाला	चूडाला
शिखावान्	लौ/चोटी वाला (दीपक)	शिखावती
मेधावान्	बुद्धिमान्	मेधावती
लोमशः, रोमशः	रोएँ वाला	लोमशा, रोमशा

पामनः	खुजली रोग वाला	पामना
अङ्गना (स्त्रीलिंग)	सुन्दरी महिला	–
लक्ष्मणः	लक्ष्मीवान्	लक्ष्मणा
पिच्छिलः, पिच्छवान्	चिकना	पिच्छिला, पिच्छवती
दन्तुरः	दँतुरा	दन्तुरा
केशवः	उत्तम केशों वाला	केशवी
मणिवः	मणिवाला (नाग)	मणिवी
अर्णवः	समुद्र	–
दण्डी, दण्डिकः	दण्ड वाला	दण्डिनी, दण्डिका
व्रीही, व्रीहिकः	धान वाला	व्रीहिणी, व्रीहिका
यशस्वी	कीर्तिमान	यशस्विनी
मायावी	मायावाला (छली)	मायाविनी
मेधावी	बुद्धिमान्	मेधाविनी
स्रग्वी	माला पहिने हुए	स्राग्विणी
वाग्ग्मी	अच्छा बोलने वाला	वाग्ग्मिनी
अर्शसः	बवासीर का रोगी	अर्शसा
अहंयुः	अहंकारी	अहंयुः
शुभंयुः	कल्याणकारी	शुभंयुः

29.5 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. लघुसिद्धान्तकौमुदी (हिन्दी आदि भाषाओं में व्याख्याओं के साथ) अनेक प्रकाशकों के पास उपलब्ध।
2. रूप चन्द्रिका, श्रीरामचन्द्र झा, चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस, वाराणसी
3. रचनानुवाद कौमुदी, श्री कपिलदेव द्विवेदी।
4. संस्कृत के प्रत्ययों का भाषाशास्त्रीय पर्यालोचन, प्रो. आजादमिश्र।

5. वैयाकरणसिद्धान्तरत्नाकरः भाग–2, प्रो. आजादमिश्र।
6. अष्टाध्यायी सूत्रपाठः, प्रो. पुष्पा दीक्षित।
7. तद्धितान्ताः केचन शब्दाः – प्रो. भागीरथ प्रसाद त्रिपाठी।

29.6 अभ्यास प्रश्न

1. धन, ज्ञान, विद्या, अर्थ और मनस् शब्दों से मतुप् करने पर पुंलिंग और स्त्रीलिंग प्रथमा एक वचन में क्या रूप निष्पन्न होंगे?
2. वाग्मी और वाग्वान् में कौन प्रत्यय हैं? स्त्रीलिंग में इनके क्या रूप होंगे?
3. दण्डी स्रग्वी, मायावी और अर्णवः में कौन–से प्रत्यय हैं।
4. दन्तुरः, पिच्छिलः, लोमशः और पामनः शब्दों के अर्थ बतावें।
5. शुभंयुः, अर्शसः, रोमशः और शुक्लः रूपों की सिद्धि करें।
6. मत्वर्थ प्रत्ययों के विधान के बाद प्रकृति में आदिवृद्धि क्यों नहीं होती?
7. किस प्रत्यय के पर में रहने पर प्रकृति की भ संज्ञा होती है?